इकाई—21

संस्कृत, अवेस्ता, पालि, प्राकृत भाषाओं का विशेषताओं की दृष्टि से अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

21.0 उद्देश्य

विश्व भाषा—परिवारों में भारोपीय भाषा—परिवार का सर्वाधिक महत्त्व है। आप इस इकाई के अध्ययन से भारोपीय परिवार की 'आर्यशाखा' का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्

- आप संस्कृत और अवेस्ता के सम्बन्ध तथा समानताओं और विषमताओं से परिचित होंगे।
- पालि शब्द की व्युत्पत्ति को जानकर पालि की विशेषताओं से अवगत होंग।
- प्राकृत की सामान्य विशेषताओं से परिचित होंगे।
- प्राकृत के भद—प्रभद को जानकर प्रयोगात्मक सूचना को भो प्राप्त करेंगे।

21.1 प्रस्तावना

भारोपीय परिवार को दो भागों में विभक्त किया जाता है– केन्टुम् और शतम् (सतम्) वर्ग। केन्टुम् वर्ग में अधिकांश यूरोपीय भाषाएँ आती हैं और सतम् वर्ग में मुख्य रूप से संस्कृत और अवेस्ता भाषाएँ। संस्कृत और अवेस्ता में इतनी अधिक समानता है कि इनको एक पृथक् शाखा माना गया है। इसको भारत ईरानी शाखा कहते हैं।

1. **प्राचीनतम साहित्य**– विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ 'ऋग्वद' अपने शुद्ध एवं प्राचीनतम रूप में संस्कृत में उपलब्ध है। वैदिक साहित्य का समय 4 हजार ईसा पूर्व से 1 हजार ईसा पूर्व के मध्य माना जाता है। इतना प्राचीन साहित्य किसी भाषा में नहीं है।
2. **अवेस्ता**– पारसियों का धर्मग्रन्थ अवेस्ता (700 ईसा पूर्व के लगभग) इसी शाखा में प्राप्य है। यह वैदिक काल के समकक्ष है।
3. **भाषाविज्ञान का जनक**– यूरोप में संस्कृत और अवेस्ता के अध्ययन ने ही 'तुलनात्मक भाषाविज्ञान' को जन्म दिया है।
4. **प्राचीन वर्णमाला एवं ध्वनियाँ**– मूल भारोपीय भाषा की प्राचीन ध्वनियों के निर्धारण में संस्कृत और अवेस्ता का असाधारण योगदान है।
5. **प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता**– विश्व की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का सर्वाङ्गीण इतिहास संस्कृत और अवेस्ता भाषा के साहित्य से प्राप्त होता है।
6. **भाषाशास्त्रीय देन**– भाषाशास्त्र को ध्वनिविज्ञान, पदविज्ञान और अर्थविज्ञान का मौलिक
   आधार संस्कृत से ही प्राप्त होता है।

21.2 वैदिक–संस्कृत और अवेस्ता

भारत की प्राचीनतम भाषा संस्कृत है। इसका भो प्राचीनतम रूप वैदिक संस्कृत में मिलता है। ईरान की प्राचीन भाषा 'अवेस्ता' है। ईरानियों के धर्मग्रन्थ का नाम 'अवेस्ता' है। इसकी भाषा को भो 'अवेस्ता' ही कहते हैं। 'अवेस्ता' संस्कृत 'अवस्था' का अपभश है, इसका अर्थ है– 'व्यवस्थित, परिनिष्ठित रूप'। अतः 'अवेस्ता' शब्द 'धर्मग्रन्थ' का वाचक है जेन्द शब्द 'छन्दस्' का अपभश है इसका अर्थ है टीका, व्याख्या। अवेस्ता की टीका को जेन्द कहते हैं। यह पहलवी भाषा में है। टीका–सहित धर्मग्रन्थ को 'जेन्दावेस्ता' कहते हैं।

21.2.1 संस्कृत और अवेस्ता की समानताएँ

1. मूल भारोपीय भाषा के मूल हस्व स्वर a,e,o अॅ, ऍ, ओ के स्थान पर 'अ' औद दीर्घ मूल स्वर– अ, ए, ओ के स्थान पर 'आ'।
2. भारोपीय उदासीन स्वर अॅ को इ।
3. भारोपीय र् (ऋ) और ल् (लृ) में अभद (रलयोरभदः)। दोनों में र् को ल् और ल् को र्।
4. इ, उ, र्, क् के बाद भारोपीय स् को अवेस्ता में 'श्' और संस्कृत में 'ष्'।
5. भारोपीय कवर्ग (कंठ–तालव्य–क्य् ख्य् आदि) क्, ख्, ग्,घ् हुए। भारत–ईरानी में क्रमशः श्, श्ह्, ज्, ज्ह हुए। बाद में संस्कृत में श्, ज्, ह् हुए और ईरानी में स्, ज्, ज्ह्,।
6. भारोपीय कवर्ग (कंठोष्ठय–क्व्, ख्व् आदि) क्, ख्, ग्, घ्, हुए। यदि इनके बाद इ, ए स्वर थे तो ये चवर्ग च्, छ्, ज्, झ्, हुए।
7. अजन्त शब्दों में षष्ठी बहु. में 'नाम्' प्रत्यय।

8. लोट् लकार प्रथम पुरूष एक. में 'तु' प्रत्यय।

शब्दरूप, धातुरूप आदि की समानताएँ

1. अवेस्ता में संस्कृत के तुल्य ही शब्दरूप चलते हैं। अवेस्ता में भो 8 कारक (कर्त्ता, कर्म आदि), तीन वचन और तीन लिंग हैं। कारक–चिह्न भो प्रायः समान हैं। जैसे– एक. और बहु. के कारक चिह्न।
2. अवेस्ता में भो संस्कृत के तुल्य विशेषणों के रूप विशेष्य के तुल्य चलते हैं।
3. अवेस्ता में भो संस्कृत के तुल्य संख्याएँ और संख्येय (प्रथम आदि) शब्द मिलते–जुलते हैं। संस्कृत–एकः, द्वौ, त्रयः, चत्वारः, पंच आदि। अवेस्ता– अएव, द्वा, त्रि, चथ्वर, पंच, श्वश्, हप्त, अश्ट, नव आदि। विसति (20), त्रिसत् (30)। फतम (प्रथम), बित्य (द्वितीय), थ्रित्य (तृतीय), तुइर्य (तुर्य, चतुर्थ)।
4. सर्वनाम शब्दों में भो अधिकांश में साम्य है। युष्मद्, अस्मद् के तुल्य रूप मिलते हैं। अजम् (अहम्), मा (माम्), मत् (मत्) मे (मे)। तूम (त्वम्), थ्वम् (त्वाम्) थ्वत् (त्वत्), तव (तव)।
5. अवेस्ता में वाच्य, काल, वृत्ति, लेट् लकार का प्रयोग आदि वैदिक संस्कृत के तुल्य है। तुमुन्, ल्यप् (य) वाले रूप भो हैं। इनके प्रयोग में भो समानता है। परस्मैपद और आत्मनेपद वाले तिङ् प्रत्यय भो हैं।– परस्मैपद–ति,हि,मि (सं,ति,सि,मि)।
6. अवेस्ता में भो संस्कृत के तुल्य 10 गण हैं। इसमें भो विकरण (अ,य, अय आदि) और अविकरण (शप्–लोप आदि) भद हैं। शप्, श्यन्, श्नम्, श्ना आदि के तुल्य अ, य, अय, नु, न्, ना, उ आदि विकरण हैं। लोट्, विधिलिङ् आदि के अतिरिक्त लेट् (वैदिक लकार) के भो रूप मिलते हैं।
7. अवेस्ता में लिट् (परोक्षभत्) में द्वित्व वाले रूप मिलते हैं।
8. अवेस्ता में लृट् (भविष्यत्) में संस्कृत के तुल्य 'स्य' का 'ह्य' विकरण मिलता है।
9. अवेस्ता में संस्कृत के तुल्य कर्मवाच्य, णिजन्त, सन्नन्त, यङत, नामधातु आदि हैं।
10. अवेस्ता में संस्कृत के तुल्य शतृ, त–इत–न, ल्यप् (य), तुमुन् अर्थ वाले वैदिक प्रत्यय–तुम, ध्यै, तयै, असे आदि भो मिलते हैं।
11. वैदिक मन्त्रों और अवेस्ता की गाथाओं की छन्दोरचना में बहुत अधिक साम्य है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वैदिक संस्कृत और अवेस्ता एक ही भाषा के दो पृथक् विकसित रूप है। अवेस्ता वैदिक संस्कृत के बहुत समीप है।

21.2.2 संस्कृत और अवेस्ता की विषमताएँ

संस्कृत और अवेस्ता भाषाओं में अनेक विषमताएँ भो हैं, इसके कारण इन्हें अलग–अलग रखा गया है–

1. **मात्रा भद**– दोनों में स्वरमात्राओं में भद मिलता है।

संस्कृत	अवेस्ता
अथ	अथा
ऋतम	रतूम्

2. **उदासीन स्वर**– संस्कृत के अ और आ के स्थान पर अवेस्ता में उदासीन स्वर मिलता है। सं.सन्ति (हन्ति)
3. संस्कृत ए का अवेस्ता में अए। वेद (वएदा)।
4. संस्कृत ओ का अवेस्ता में अओ । होता (ज़ओता)।
5. सं एं और औ को अवेस्ता में अइ, अउ,। देवैः (दएवइश)।

6. अवेस्ता में स्वरों का बाहुल्य है। अवेस्ता में 8 स्वर हैं, जिनके स्थान पर संस्कृत में केवल आ,आ, ये 2 स्वर मिलते हैं।
7. संस्कृत ऋ के स्थान पर अर् र् या अ मिलता है। कृणोति करनओति।
8. सं क्, त्, प् को क्रमशः संघर्षी ख्, थ्, फ्, हो जाते हैं।
9. अवेस्ता में चवर्ग में से केवल च्, ज् हैं।
10. अवेस्ता में टवर्ग सर्वथा नहीं है।
11. अवेस्ता में नासिक्य ध्वनियाँ ङ्, न्, म् हैं। ज़्, ण् नहीं हैं।
12. अवेस्ता में ल् सर्वथा नहीं है इसके स्थान पर र् है।
13. कवर्ग आदि वर्गों के चतुर्थ वर्ण अवेस्ता में नहीं है।
14. अवेस्ता मे अन्तिम स्वरों को दीर्ध हो जाता है। असुर अहुरा, असि अही।

21.3 प्राचीन प्राकृत या पालि (प्रथम प्राकृत)

प्राकृत का अर्थ–प्राकृत शब्द की व्युत्पत्ति को लेकर तीन मत प्रस्तुत किए गए हैं–

(क) प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से– प्राकृत भाषा के सभो प्राचीन वैयाकरणों ने प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से मानी है। संस्कृत भाषा को ही आधार मानकर उन्होंने ध्वनि–भद आदि का विवरण दिया है। 'प्राकृत' का अर्थ है– मूलभाषा संस्कृत, उससे उत्पन्न भाषा प्राकृत है। हेमचन्द्र आदि का यही विचार है–

1. प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं, तत आगतं वा प्राकृतम्। (हेमचन्द्र)
2. प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं प्राकृतमुच्यते। (प्राकृत–सर्वस्व)
3. प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवत्वात् प्राकृतं स्मृतम्। (प्राकृत–चन्द्रिका)
4. प्रकृतेः संस्कृतायास्तु विकृतिः प्राकृती मता। (षड्भाषाचन्द्रिका)
5. प्राकृतस्य तु स्वमेव संस्कृतं योनिः। (प्राकृत–संजीवनी)

(ख) प्राकृत प्राचीन जनभाषा– प्राकृत प्राचीन प्रचलित जनभाषा है। 'प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धं प्राकृतम्'। प्राकृत का ही परिष्कृत रूप संस्कृत भाषा है अर्थात् प्राकृत से संस्कृत निकली है। पाश्चात्य विद्वान् इस मत के प्रतिपादक हैं।

(ग) प्राकृत और संस्कृत की स्वतन्त्र परम्परा– कतिपय विद्वानां ने यह मत प्रस्तुत किया है कि न संस्कृत प्राकृत से निकली है और न प्राकृत संस्कृत से। दोनों भाषाओं की स्वतन्त्र परम्पराएँ हैं।

समीक्षा–

विचार करने से ज्ञात होता है कि वस्तुतः संस्कृत का ही विकृत रूप प्राकृत है। इस विषय में भम और विवाद का कारण 'संस्कृत' शब्द हैं।

संस्कृत से केवल पाणिनि–सम्मत भाषा ही नहीं समझना चाहिए। जन–व्यवहृत भाषा का साहित्यिक रूप 'संस्कृत' कहा गया और बोलचाल की संस्कृत का नाम 'प्राकृत' रहा। इसी आधार पर प्राकृत के सभो वैयाकरणों ने संस्कृत को आधार मानकर ध्वनि–परिवर्तन आदि समझाए हैं।

नाट्यशास्त्रकार भरत मुनि (चतुर्थ शती ई.पू.) ने भो यही मत प्रतिपादित किया है कि संस्कृत भाषा के शब्दों का ही विकृत एवं परिवर्तित रूप प्राकृत भाषा है।

21.3.1 पालि की व्युत्पत्ति

पालि' शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में अनेक मत प्रस्तुत किए गए हैं। प्रमुख मत ये हैं–

1. आचार्य बुद्धघो (चतुर्थ शती ई.) और आचार्य धम्मपाल (छठी शती ई.) ने 'पालि' शब्द का प्रयोग बुद्धवचन या मूल त्रिपिटक के लिए किया है। उससे यह शब्द 'पालि' भाषा के लिए आया।
2. आचार्य विधुशेखर भट्टाचार्य ने 'पंक्ति' से पालि की उत्पत्ति इस प्रकार बताई है–पंक्ति पंति पत्ति पल्लि पालि।
3. भिक्षु सिद्धार्थ ने 'पाठ' से पालि की उत्पत्ति मानी है पाठ, पाल, पालि।
4. भिक्षु जगदीश काश्यप ने परियाय (बुद्धोपदेश) शब्द से पालि की उत्पत्ति मानी है। पाटलि पाडलि पालि।
5. डॉ. मैक्स वेलेसन (जर्मन विद्वान्) ने पाटलि (पाटलिपुत्र) से पालि की उत्पत्ति मानी है। पाटलि पाडलि पालि।
6. पाल्लि (गाँव) शब्द से पालि। पल्लि पालि
7. प्राकृत शब्द से 'पालि'। प्राकृत पाकट पाअड पाअल पालि।
8. अभिधानप्पदीपिका (पालिभाषा–कोशग्रन्थ) ने पा धातु से पालि शब्द माना है। पा–पालेति रक्खतीति पालि, जो रक्षा करती है या पालन करती है।
9. अमरकोश के टीकाकार भानुजी दीक्षित ने 'पाल रक्षणे' से पालि शब्द माना है। पाल्+इ=पालि।

   उक्त मतों की समीक्षा से ज्ञात होता है कि इनमें से कुछ मत केवल बौद्धिक व्यायाम हैं। जैसे–पंक्ति, पाठ, प्राकृत, पाटलि आदि। आचार्य बुद्धघो और आचार्य धम्मपाल के उल्लेखों से सिद्ध है कि बुद्ध–वचन या बुद्धोपदेश के लिए 'पालि' शब्द चतुर्थ शती ई. में प्रचलित था। पल्लि शब्द से 'पालि' सरलता से बन सकता है, परन्तु इसका पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता है।

21.3.2 पालि की प्रमुख विशेषताएँ

1. पालि में वैदिक संस्कृत की 5 स्वर–ध्वनियाँ लुप्त हो गई–ऋ ॠ, लृ, ऐ, औ।
2. पालि में वैदिक संस्कृत के 5 व्यंजन लुप्त हो गए– श, ष, विसर्ग (:), जिह्वा–मूलीय, उपध्मानीय।
3. पालि में दो नए स्वर आ गए– ह्रस्व ऍ, ह्रस्व ऑ।
4. पालि में वैदिक संस्कृत के दो व्यंजन ल, ल्ह भो मिलते है।
5. पालि में संस्कृत के ऐ को ए और औ को ओ हो गया है।
6. पालि में संयुक्त वर्ण से पूर्ववर्ती दीर्घ को ह्रस्व हो जाता है, यदि दीर्घ स्वर रहेगा तो संयुक्त व्यंजन में से एक का लोप हो जाएगा। जीर्ण > जिण्ण, दीर्घ > दीघ
7. अघोष वर्ण घोष हो जाता है क् ग्–प्रतिकृत पटिगच्च च् > ज्, त् > द् वितस्ति > विदत्थि।
8. ड, ढ को ल ल्ह। बडवा बलवा।
9. संधि में केवल तीन संधियाँ है–
   1. स्वर संधि
   2. व्यंजन संधि
   3. निग्गहीत (अनुस्वार) संधि। विसर्ग संधि आदि नहीं है।

10. पालि में हलन्त शब्द नहीं है। केवल अजन्त ही हैं। हलन्त शब्दों को अकारान्त बना देते हैं या अन्तिम व्यंजन का लोप कर देते है। धनवत् > धनवन्त आत्मन् > अत्त।
11. पालि में द्विवचन नहीं होता है।
12. पालि में तीनों लिंग हैं।
13. शब्दरूपों में चतुर्थी और षष्ठी के रूप समान होते हैं।
14. स्त्री–प्रत्यय सात हैं–आ, ई, इनी, नी, आनी, ऊ, ति। अजा, कुमारी, यक्खिनी, दण्डिनी, मातुलानी, वामोरू, युवति।
15. पालि में 500 से अधिक धातुएँ हैं। अदादि और जुहोत्यादि नहीं हैं।
16. पालि में लेट् लकार वाले भो रूप मिलते हैं–हनासि, दहासि।
17. पालि में णिच्, सन्, यङ् नामधातु प्रत्यय वाले रूप मिलते हैं।
18. पालि में वैदिक संस्कृत के तुल्य तुम् अर्थ वाले अनेक प्रत्यय मिलते हैं– तुम्, तवे, तये, तुये। जि > जिनितुम् हा > पहातवे, गण् > गणेतुये।
19. आत्मनेपद का प्रयोग प्रायः लुप्त हो गया। परस्मैपद शेष रहा।
21. पालि में टर्नर आदि के अनुसार दोनों प्रकार का स्वराघात था– संगीतात्मक और बलाघातात्मक।
21. पालि में तद्भव शब्दों का आधिक्य है। तत्सम और देशज़ शब्द कम हैं।

21.4 मध्यकालीन (द्वितीय प्राकृत)

21.4.1 प्राकृत के भद

प्राकृत–व्याकरण के सबसे प्राचीन वैयाकरण वररूचि ने चार प्राकत मानी– शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी, पैशाची। मागधो के दो रूप हो गए हैं– मागधी और अर्धमागधी। इस प्रकार से पाँच प्राकृत हैं।

21.4.2 शौरसेनी

इसका क्षेत्र शूरसेन (मथुरा के आस–पास) का प्रदेश था। इसका विकास पालिकालीन स्थानीय भाषा से हुआ। यह मध्यप्रदेश की भाषा थी। नाटकों में सर्वाधिक प्रयोग इसी का हुआ है। स्त्रियों आदि का वार्तालाप शौरसेनी प्राकृत में ही होता था। केवल पद्य के लिए महाराष्ट्री थी। शौरसेनी से ही वर्तमान हिन्दी का विकास हुआ है। राजशेखर–कृत कर्पूरमंजरी का समस्त गद्य भाग शौरसेनी प्राकृत में है। भास, कालिदास आदि के नाटकों में गद्य शौरसेनी में ही है। इसमें सरलता, सरसता, श्रवण–सुखदता अधिक थी अतः यह अधिक लोकप्रिय हुई।

21.4.3 महाराष्ट्री

यह शुद्ध शब्द माहाराष्ट्री है। इसका मूलस्थान महाराष्ट्र है। इससे ही मराठी भाषा का विकास हुआ है। प्राकृतों में सबसे अधिक साहित्य महाराष्ट्री में है। संस्कृत नाटकों में प्राकृत में पद्यरचना महाराष्ट्री में ही है। महाराष्ट्री प्राकृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं– राज हाल–कृत 'गाहा–सत्तसई' (गाथा–सप्तशती), प्रवरसेन–कृत 'रावणवहो' (सेतुबन्धः), वाक्पति–कृत 'गउढवहो' (गौडवधः) कर्पूरमंजरी के पद्य महाराष्ट्री में हैं। दण्डी ने काव्यादर्श में महाराष्ट्री को सर्वश्रेष्ठ प्राकृत माना है। 'महाराष्ट्राश्रयां भाषां प्राकृतं विदुः' (काव्यादर्श–34)

21.4.4 मागधी

यह मगध की भाषा थी। इसका साहित्य बहुत कम मिलता है। इसका प्राचीनतम रूप अश्वघोष के नाटकों में मिलता है। कालिदास के नाटकों में तथा शूद्रक के मृच्छकटिक में मागधी का प्रयोग मिलता है। भरत के नाटयशास्त्र (अ. 17 श्लोक 50, 56) के अनुसार यह

अन्तःपुर के नौकर, अश्वपालक आदि की भाषा थी इसके तीन प्रकार मिलते है– शाकारी, चाण्डाली, शाबरी।

21.4.5 अर्धमागधी

अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के मध्य में है। यह प्राचीन कोसल के समीपवर्ती क्षेत्र की भाषा थी। इसमें मागधी के गुण अधिक हैं। साथ ही शौरसेनी के गुण भो हैं, अतः इसे अर्धमागधी कहा जाता है। इसको ऋषिभाषा या आर्यभाषा भो कहते हैं। भगवान् महावीर के सारे धर्मोपदेश इसी भाषा में हैं। इसमें प्रचुर मात्रा में जैन–साहित्य मिलता है। अतः इसका विशेष महत्त्व है। इसमें गद्य और पद्य दोनों प्रकार का साहित्य है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में इसे चेट, राजपुत्र एवं सेठों की भाषा बताया है। मुद्राराक्षस और प्रबोधचन्द्रोदय में अर्धमागधी का प्रयोग हुआ है।

21.4.6 पैशाची

पैशाची का क्षेत्र पश्चिमोत्तर भारत एवं अफगानिस्तान का क्षेत्र था। पैशाची को पैशाचिकी, भ्तभाषा, भ्तभाषित आदि भो कहते हैं। महाभारत में कश्मीर के पास रहने वाली 'पिशाच' जाति का उल्लेख है। गुणाढ्य की अतिप्रसिद्ध रचना 'बृहत्कथा' पैशाची प्राकृत म ही थी।

21.4.7 प्राकृत भाषाओं की सामान्य विशेषतायें

1. प्राकृत भो संस्कृत के तुल्य श्लिष्ट योगात्मक भाषा है।
2. संस्कृत व्याकरण को सरल बनाया गया है।
3. शब्दरूपों और धातुरूपों की संख्या कम हो गई।
4. शब्दों के रूप केवल तीन या चार प्रकार के ही रह गए।
5. धातुरूप भो प्रायः एक या दो प्रकार से चलने लगे।
6. अस्पष्टता के निवारणार्थ परसर्गों (कारक–चिह्नों आदि) की सृष्टि हुई।
7. भाषा संयोगात्मक से वियोगात्मक की ओर अग्रसर हुई।
8. शब्दरूप प्रायः अकारान्त के तुल्य चलने लगे और धातुरूप प्रायः भ्वादिगण के तुल्य हो गए।
9. चतुर्थी विभक्ति का अभाव हो गया। प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के बहुवचन प्रायः एक हो गए।
10. लङ्., लिट् लुङ् लकारों का अभाव हो गया।
11. द्विवचन का अभाव हो गया।
12. आत्मनेपद का भो अभाव हो गया।
13. ध्वनि–परिवर्तन मुख्य रूप से हुआ। संयुक्ताक्षरों में प्रायः पर–सवर्ण या पूर्व–सवर्ण हुआ।
14. कुछ प्राचीन ध्वनियों का अभाव हो गया। स्वरों में –ऋ, ॠ, लृ, ऐ, औ। व्यंजनों में य, श, ष विसर्ग। मागधी में य, श है, स नहीं।
15. संस्कृत में अप्राप्त दो नए स्वर आ गए– ह्रस्व ऍ और ऑ।
16. साधारणतया शब्द के अन्तिम व्यंजन का लोप हो जाता है।
17. ह्रस्व स्वर के बाद दो से अधिक और दीर्घ स्वर के बाद एक से अधिक व्यंजन नहीं रहते।
18. स्वर–सम्बन्धी मुख्य परिवर्तन ये हुए–

    (क) ऋ को अ, इ या उ हो गया।

(ख) ऐ को ए, औ को ओ।

(ग) मध्यगत व्यंजन का लोप होने पर पूर्ववर्ती हस्व को दीर्घ स्वर।

(घ) अनुदात्त स्वर का लोप।

(ङ) संप्रसारण होकर य् को इ, व् को उ।

19. मध्यगत वर्णों में मुख्य परिवर्तन ये होते हैं–

(क) मध्यगत क,त,प का लोप होता है या उन्हें ग, द, ब होते हैं।

(ख) मध्यगत य का सदा लोप होता है।

(ग) मध्यगत महाप्राण वर्णों (ख, घ, थ, ध आदि) को ह हो जाता है।

(घ) मध्यगत ट को ड और ठ को ढ होता है।

(ङ) प को व होता है।

(च) 11 से 18 संख्याओं में द को र होता है।

(छ) श, ष, स को स मागधी में श।

21. संयुक्ताक्षरों में मुख्य परिवर्तन ये होते हैं–

(क) दो स्पर्श वर्णों में परसवर्ण होता है।

(ख) स्पर्श के बाद अनुनासिक को पूर्वसवर्ण होगा।

(ग) ज्ञ को ण्ण्।

(घ) स्पर्श बाद में होने पर ल् को परसवर्ण।

(ङ) क्ष को क्ख या च्छ।

(च) त्य > च्च, ध्य > ज्झ।

(छ) र् को स्पर्श का सवर्ण।

21. प्रथमा एकवचन विसर्ग (:) मागधी में 'ए' हाता है, अन्यत्र 'ओ'।

22. धातुओं के अर्थों में काफी अन्तर हुआ है।

23. संगीतात्मक स्वर के स्थान पर बलाघातात्मक स्वर हो गए हैं।

24. तद्भव शब्दों की संख्या अधिक है, तत्सम कम।

21.5 पारिभाषिक शब्दावली

1. **संस्कृत** – सम्+कृ+वत्त अर्थात्परिनिष्ठित एवं परिमार्जित भाषा को संस्कृत कहते है।

2. **अवेस्ता**– पारसियों का धर्मग्रन्थ अवेस्ता (700 ईसा पूर्व के लगभग) इसी शाखा में प्राप्य है। यह वैदिक काल के समकक्ष है।

3. **पालि** –'आचार्य बुद्धघो (चतुर्थ शती ई.) और आचार्य धम्मपाल (छठी शती ई.) ने 'पालि' शब्द का प्रयोग बुद्धवचन या मूल त्रिपिटक के लिए किया है। उससे यह शब्द 'पालि' भाषा के लिए आया।

4. **प्राकृत'** – प्राकृत' का अर्थ है– मूलभाषा संस्कृत, उससे उत्पन्न भाषा प्राकृत है। हेमचन्द्र आदि का यही विचार है–

प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं, तत आगतं वा प्राकृतम्। (हेमचन्द्र)

5. **शौरसेनी** – इस प्राकृत का क्षेत्र शूरसेन (मथुरा के आस–पास) का प्रदेश था।

6. **र्धमागधी** – अर्धमागधी प्राकृत का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के मध्य में है।

21.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अवेस्ता का शाब्दिक अर्थ है–

   (क) टीका (ख) जेन्द

   (ग) व्यवस्थित (घ) छन्द

2. उदासीन स्वर पाया जाता ह–

   (क) संस्कृत में (ख) पालि में

   (ग) अवेस्ता में (घ) प्राकृत में

3. टवर्ग का सर्वथा अभाव है–

   (क) संस्कृत (ख) प्राकृत

   (ग) पालि (घ) अवेस्ता

4. बुद्धवचन या त्रिपिटक के लिए किसका प्रयोग किया जाता था–

   (क) प्राकृत (ख) संस्कृत

   (ग) पालि (घ) अवेस्ता

5. भगवान महावीर के उपदेश जिस भाषा में हैं–

   (क) महाराष्ट्री (ख) मागधी

   (ग) अर्धमागधी (घ) शौरसेनी

6. संस्कृत और अवेस्ता की किन्हीं चार समानताओं का निरूपण करें?
7. संस्कृत और अवेस्ता की किन्हीं चार विषमताओं को लिखिये?
8. पालि शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में संक्षिप्त नोट लिखिये?
9. पाँच प्रकार की प्राकृत का निरूपण कीजिए?
10. प्राकृत भाषाओं की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिये?

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (क) 2. (ग) 3. (घ) 4. (ग) 5. (ग)
6. द्रष्टव्य–20.2.1
7. द्रष्टव्य– 20.2.2
8. द्रष्टव्य– 20.3.1
9. द्रष्टव्य– 20.4.2, 20.4.3, 20.4.4, 20.4.5, 20.4.6
10. द्रष्टव्य– 20.4.7

21.7 सारांश

इस इकाई में आपने भारोपीय भाषा परिवार तथा उसमें भो आर्य परिवार या अवेस्ता का साम्य तथा वैषम्य जाना।

भारतीय आर्यभाषाओं के अन्तर्गत प्राकृत की सामान्य विशेषताओं और पाँच प्रकार के भदों को जाना।

पालि के नामकरण तथा वैशिष्ट्य के विषय में जानकारी प्राप्त की।

21.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. तुलनात्मक भाषा विज्ञान– डॉ. पाण्डुरंग दामोदर गुणे, मोतीलाल बनारसीदास, 1963.
2. संस्कृत भाषाविज्ञान– राजकिशोर सिंह, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा,1986.
3. Introduction to Sanskrit Philology – बटुकृष्णघोष, मुन्शीराम मनोहरलाल,नई दिल्ली,1943.
4. भाषाविज्ञान,भोलानाथ तिवारी,किताब महल,इलाहाबाद,1951.
5. भाषाविज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ. कपिल देव द्विवेदी,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी,2002.